लोकतंत्र और राजनीति विज्ञान की शिक्षा

योगेन्द्र यादव

मैं बहुत सीमित अर्थ में यह पूछना चाहता हूँ कि हमारे यहाँ हर स्कूल में सामाजिक विज्ञान या राजनीतिक विज्ञान नामक जो विषय पढ़ाया जाता है उसका हमारे लोकतंत्र से क्या रिश्ता है? क्या वह लोकतंत्र को मज़बूत बनाता है या कमज़ोर करता है? क्या उसमें कुछ बेहतर किया जा सकता है? यह सब कहने के पीछे मेरे मन में कोई गहरा शोध और अनुभव नहीं है।

मेरा सिर्फ एक छोटा-सा अनुभव पिछले दो साल का है। यह अनुभव भी खासतौर से राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) की किताबें लिखने का है। एनसीईआरटी ने हमें कक्षा 6 से 12 तक की राजनीति विज्ञान की किताबें नए सिरे से लिखने के लिए आमंत्रित किया। अब आप इस विषय को राजनीति विज्ञान कहना चाहें या नागरिक शास्त्र या राजनीति शास्त्र। आप इसका जो भी नाम देना चाहें, सभी किताबों को बदलना था और नए सिरे से लिखना था। हमें उसका न्यौता मिला और हमने पिछले दो साल में इन्हें बनाने का प्रयास किया। उसके जो अनुभव हैं, मैं उसी के बारे में आपसे बात करना चाहता हूँ।

I
शिक्षा का लोकतंत्र में योगदान

सवाल यह है कि शिक्षा का लोकतंत्र से क्या रिश्ता है? शिक्षा लोकतंत्र में क्या योगदान देती है या दे सकती है? यदि आप यह सवाल पूछें कि शिक्षा लोकतंत्र में क्या योगदान देती है तो इसका उत्तर लगभग साफ और सपाट है - कुछ नहीं देती। योगदान की बजाय शायद समस्या ज़्यादा खड़ी करती है। मैं आपको एक छोटी-सी मिसाल देता हूँ।

मैं हरियाणा का रहने वाला हूँ। आप दिल्ली की नाक के नीचे गुड़गाँव से 15 किलोमीटर अन्दर चले जाइए। गुड़गाँव,

जिसे दिल्ली में हम टेक्नोलॉजी और21वीं सदी इत्यादि जैसे मुहावरों का बहुत बड़ा केन्द्र मानते हैं। जहाँ आई.टी. हब्स और सब कुछ आ रहा है। आपको एक इलाका मिलेगा जिसका नाम है मेवात। जिन इलाकों में देश की सबसे कम साक्षरता है उनमें से एक मेवात भी है। कम-से-कम मुस्लिम समाज में सबसे कम साक्षरता दिल्ली की नाक के नीचे इसी इलाके में है। एनसीईआरटी की किताबें लिखने से पहले मैं घूमता-फिरता वहाँ चला गया और एक स्कूल में जाकर बैठ गया। यह सरकारी स्कूल था और मैंने मास्टर जी से पूछा, "क्या मैं कक्षा 9 और 11 में से किसी के नागरिक शास्त्र के पीरियड में बैठ सकता हूँ?" उन्होंने कहा, "बैठें क्यों, आप पढ़ा दीजिए न।" मास्टर जी के लिए तो अच्छा ही था कि कोई बाहर से आया है और बच्चों को पढ़ाने के लिए तैयार है। मुझे पता चला कि दो महीने से स्कूल के नागरिक शास्त्र के मास्टर जी छुट्टी पर थे। एक कक्षा में संस्कृत के और दूसरी कक्षा में कॉमर्स के मास्टर जी नागरिक शास्त्र पढ़ा रहे थे। ज़ाहिर है कि उन्हें कोई अफसोस या दुख नहीं हुआ कि यह व्यक्ति दो-एक घण्टे आकर बैठना चाहता है।

देश कौन चलाता है?

मैं कक्षा में बैठा और बच्चों से एक-दो घण्टे बातें कीं। ये बच्चे समाज के सबसे गरीब तबके के नहीं थे। कम-से-कम मुझे उनमें से कुछ लड़कियों को देखकर लगा कि वे खाते-पीते किसान परिवारों से हैं। गाँव में यह कायदा है कि लड़के को शहर के और लड़कियों को गाँव के ही स्कूल में भेजा जाता है। जिनके साथ मैंने बातचीत की वे कक्षा 11 के बच्चे थे और उन्होंने राजनीति शास्त्र को एक ऐच्छिक विषय के रूप में लिया था।

उस वक्त कक्षा में जो चल रहा था उसी से जोड़कर मैंने चर्चा शुरू की। ज़्यादातर बच्चों को पता था कि राष्ट्रपति कौन है। क्विज़ की तरह सबको राष्ट्रपति का नाम पता था। मैंने पूछा, "लोकतंत्र शब्द सुना है? क्या हमारे देश में लोकतंत्र है?" एक बहुत ही होशियार-सी लड़की ने कहा, "हाँ, हाँ! एक तो लोकतंत्र है और एक राजतंत्र है।" मैंने पूछा, "क्या ये दोनों एक साथ हमारे देश में हैं?" उसने कहा, "हाँ, लोकतंत्र का 5 साल के लिए और राजतंत्र का 6 साल के लिए चुनाव होता है।" मुझे समझ में आ गया कि वह लोकसभा और राज्यसभा की बात कर ही रही है। बस, शब्दों में थोड़ा हेर-फेर हो गया है।

मैंने पूछा, "देश में किसका राज होता है? प्रधानमंत्री कौन होता है?" प्रधानमंत्री का नाम सब बच्चों को पता था। राष्ट्रपति के बारे में बच्चों के बहुत अच्छे ख्यालात थे कि वे बहुत अच्छे आदमी हैं, जैसे कि हमारे पिछले राष्ट्रपति के बारे में ज़्यादातर बच्चों के ख्यालात थे। मैंने कहा, "हाँ, वे आदमी तो बहुत बढ़िया हैं, लेकिन देश कौन चलाता है?" उन्होंने कहा, "राष्ट्रपति चलाता है।" मैंने कहा, "चलाता तो है। मान लीजिए राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री में थोड़ा-सा मतभेद हो जाए तो क्या होगा?" उन्होंने कहा, "मतभेद होना ही नहीं चाहिए, दोनों आपस में बैठकर सुलझा लें।" मैंने कहा, "यह तो बहुत अच्छी बात है। मान लीजिए कि मामला नहीं सुलझे तो?



राष्ट्रपति का मानना है कि देश में फलाँ चीज़ होनी चाहिए और प्रधानमंत्री कहते हैं कि नहीं दूसरी चीज़ होनी चाहिए, तो फिर क्या होगा?"

बच्चों में इस विषय पर काफी चर्चा हुई। मैंने भी कहा कि "आपस में खूब सलाह-मशविरा कर लीजिए, इम्तिहान नहीं है इसलिए सोच-समझ कर जवाब दें।" सबने काफी बातचीत करके कहा, "अगर ऐसा कुछ हो जाए तो ज़ाहिर है राष्ट्रपति की बात चलेगी क्योंकि राष्ट्रपति इस देश के प्रमुख हैं।" मैंने पूछा, "प्रधानमंत्री की

राय का क्या होगा?" बच्चों ने कहा, "नहीं, उन्हें राष्ट्रपति की बात माननी पड़ेगी क्योंकि राष्ट्रपति प्रधानमंत्री को नियुक्त करते हैं। ज़ाहिर है, राष्ट्रपति की बात चलेगी।"

लोकसभा और राज्यसभा के बारे में मैंने पहले पूछा था कि, "लोकसभा और राज्यसभा में से ज़्यादा शक्ति किसके पास होती है?" फिर काफी चर्चा हुई। उन सब की राय थी कि "ज़ाहिर है कि वरिष्ठ सदन राज्यसभा होती है तो वरिष्ठ सदन के पास ज़्यादा शक्ति होती है।" कक्षा में बातचीत के दौरान ये सब चलता रहा। मुझे थोड़ी-सी खीज हुई, खीज उनसे नहीं थी। बाद में मैंने उनकी किताब को पलटकर देखा। उस किताब के अन्दर राष्ट्रपति की शक्तियों के बारे में14 पेज थे और प्रधानमंत्री के बारे में दो पैराग्राफ। अगर बच्चे इससे यह निष्कर्ष निकालें कि इस देश में राष्ट्रपति शासन करता है तो इसमें गलत क्या है! पता नहीं आप में से कितने लोगों को कभी भी राजनीति शास्त्र पढ़ना पड़ा है। जिन्होंने पढ़ा है वे जानते होंगे कि पाठ्य पुस्तकों में राष्ट्रपति की विधायिका, कार्यपालिका, न्यायिक और प्रशासनिक शक्तियों के बारे में काफी विस्तार से बताया जाता है। उनके पास आपातकाल की भी शक्तियाँ होती हैं। उनकी शक्तियों के बारे में बाकायदा 14 पेज पढ़ाए जाते हैं और अन्त में एक छोटा-सा ज़िक्र होता है कि राष्ट्रपति एक अदने से कर्मचारी को नियुक्त कर देता है जिसका नाम प्रधानमंत्री होता है।

यदि उनकी पाठ्यपुस्तकें ये बता रही थीं और यदि यह पढ़कर बच्चे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं तो इसमें बच्चों का क्या दोष है! पाठ्यपुस्तक बकायदा कह रही थी कि एक वरिष्ठ सदन होता है और एक निम्न सदन होता है इत्यादि। पाठ्यपुस्तक यह भी कह रही थी कि राज्यसभा में 35 साल से ऊपर के बहुत उम्दा लोग आते हैं और सब मान लेते हैं कि 35 साल से ऊपर के लोग बहुत संजीदा हुआ करते हैं। बहरहाल, पाठ्यपुस्तक में यह सब लिखा हुआ था।

किताबी बातें और खरी राजनीति

उनसे करीब एकाध घण्टे माथापच्ची करने के बाद मैंने पूछा, "इस कक्षा में बिजली क्यों नहीं है?" उन्होंने कहा, "दरअसल, पिछले तीन हफ्ते से स्कूल और पूरे गाँव में बिजली नहीं है। पूरे गाँव की बिजली इसलिए कटी हुई है क्योंकि गाँव में पंचायत के चुनाव हुए थे और चुनाव में जो मुखिया बना, दरअसल, वह हरिजन जाति का है (हरिजन शब्द हमारे यहाँ इस्तेमाल किया जाता है)। गाँव की प्रभावशाली जाति के लोगों को यह मंज़ूर नहीं है कि हरिजन जाति का व्यक्ति गाँव का मुखिया बने। हालाँकि यह सीट आरक्षित नहीं थी। उसको एक सबक सिखाने के लिए उन्होंने खण्ड विकास अधिकारी से मिलकर एक ऐसा खेल खेला है कि गाँव में 15 दिन तक बिजली नहीं आएगी तो लोग अपने आप त्राही-त्राही करेंगे और उनको पता चलेगा कि ऐसा सरपंच चुनोगे तो तुमको यही मिलेगा।"

वे ही बच्चे, जो मुझे भारत की राजनैतिक व्यवस्था के न्यूनतम बिन्दु तक नहीं बता पा रहे थे, जो कक्षा 8 के बच्चे को पता होने चाहिए, मुझे अगले एक

राष्ट्रपति प्रणाली

दुनिया में हर जगह राष्ट्रपति भारत की तरह औपचारिक शासनाध्यक्ष नहीं होता। दुनिया के अनेक देशों में राष्ट्रपति राष्ट्राध्यक्ष भी होता है और सरकार का मुखिया भी। अमेरिकी राष्ट्रपति इस तरह के राष्ट्रपति का जाना-माना उदाहरण है। उसका चुनाव लोग प्रत्यक्ष वोट से करते हैं। वही अपने मंत्रियों का चुनाव और नियुक्ति करता है। कानून बनाने का काम अभी भी विधायिका (अमेरिका में उसे कांग्रेस कहा जाता है) करती है पर राष्ट्रपति किसी भी कानून को वीटो के अधिकार से रोक सकता है। सबसे बड़ी बात यह है कि राष्ट्रपति बनने के लिए उसे कांग्रेस के बहुमत के समर्थन की ज़रूरत नहीं होती और न ही वह उसके प्रति उत्तरदायी है। उसका चार साल का तय कार्यकाल है और अपनी पार्टी का कांग्रेस में बहुमत न होने पर भी वह आराम से अपना कार्यकाल पूरा करता है। अमेरीकी मॉडल को लातिनी अमेरिका के अनेक देशों और सोवियत संघ का हिस्सा रहे कई देशों में अपनाया गया है। चूँकि सरकार के इस स्वरूप में राष्ट्रपति की भूमिका केंद्रीय होती है इसलिए इसे राष्ट्रपति प्रणाली कहा जाता है। ब्रिटेन के मॉडल को मानने वाले भारत जैसे देशों में संसद ही सर्वोच्च होती है। इसलिए, हमारी प्रणाली को शासन की संसदीय प्रणाली कहा जाता है।

कहाँ पहुँचे? क्या समझे?

इलियम्मा, अन्नाकुट्टी और मेरीमॉल राष्ट्रपति के विषय वाले हिस्से को पढ़ती हैं। वे तीनों एक-एक सवाल का जवाब जानना चाहती हैं। क्या आप उन्हें उनके सवालों के जवाब दे सकते हैं?

इलियम्माः अगर राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री किसी नीति पर असहमत हों तो क्या होगा? क्या प्रधानमंत्री का विचार हमेशा प्रभावी होगा?

अन्नाकुट्टीः मुझे यह बेतुका लगता है कि सशस्त्र बलों का सुप्रीम कमांडर राष्ट्रपति हो। वह तो एक भारी बंदूक भी नहीं उठा सकता। उसे कमांडर बनाने में क्या तुक है?

मेरीमॉलः मेरा सवाल यह है कि अगर असली अधिकार प्रधानमंत्री के पास ही हैं तो राष्ट्रपति की ज़रूरत ही क्या है?

वर्तमान पाठ्य पुस्तक का वह हिस्सा जहां राष्ट्रपति प्रणाली की चर्चा के साथ-साथ कुछ मूलभूत सवालों को भी उठाया गया है।

घण्टे तक वर्ग और राजनीति (क्लास एण्ड पॉलिटिक्स) पर एक शोध के स्तर की चीज़ें समझा रहे थे। ये मूर्ख नहीं, बहुत तेज़ बच्चे थे। उन्होंने मुझे गाँव की राजनीति की जो बारीकियाँ समझाईं उन्हें सुनकर मैं दंग रह गया कि 11वीं कक्षा के बच्चों को राजनीति के बारे में इतना पता है।

समस्या हमारी पाठ्यचर्या, हमारे पाठ्यक्रम और हमारी पाठ्यपुस्तकों की थी। बच्चा अपने सामान्य जीवन में राजनीति के बारे में जो कुछ सीखता है, उसे हम स्कूल के राजनीति शास्त्र में जगह देने को तैयार नहीं हैं। हम कहते हैं राजनीति शास्त्र का मतलब है राष्ट्रपति इस देश में कैसे चुना जाता है, आप उस प्रक्रिया का वर्णन कीजिए। इस सवाल का जवाब किसी भी विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर से पूछ लीजिए, वे भी शायद ठीक से नहीं बता पाएँगे। यदि यही सवाल इस देश की संसद के 543 सदस्यों से पूछा जाए कि राष्ट्रपति का चुनाव कैसे होता है, आधे से ज़्यादा लोग यह नहीं बता पाएँगे। लेकिन इस तरह की बेतुकी चीज़ें हम कक्षा 8 के बच्चों को पढ़ाते हैं।

राजनीति की पढ़ाई और समस्याएँ

राजनीति शास्त्र को लेकर जो समस्या है उसके हम तीन हिस्से कर सकते हैं जिसके चलते हमारे यहाँ फाँक पैदा हो गई है। एक, राजनीति के सिद्धान्त और

व्यवहार में फाँक। जो बच्चे राज्यसभा और राष्ट्रपति के बारे में बता रहे थे वे ठीक बता रहे थे, क्योंकि उन्हें राजनीति का कोरा सिद्धान्त, वह भी औपचारिक राजनीति का, ही बताया गया था। उसकी व्यवहारिकता बताई ही नहीं गई। यह राजनीति के सिद्धान्त और व्यवहार की फाँक है। राजनीति विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में बच्चा पाठ पढ़कर यह नहीं समझ सकता कि वास्तव में राजनीति के नाम पर हो क्या रहा है। मनमोहन सिंह इस देश को कैसे चला रहे हैं जबकि राज तो प्रतिभा पाटिल को चलाना चाहिए। दरअसल, उसकी पाठ्यपुस्तक उसको यह बताती ही नहीं है कि प्रधानमंत्री ही देश को चलाता है। कहीं एक शब्द बता दिया जाता है कि राष्ट्रपति एक प्रतीकात्मक मुखिया है। और क्योंकि यह एक वाक्य भर है और एक वाक्य की उतनी ही महिमा होती है जितनी कि एक वाक्य की होनी चाहिए और उस वाक्य को कोई याद नहीं रखता।

दूसरा, जो मैंने इस उदाहरण में बताया कि बच्चे के जीवन्त अनुभव और स्कूलऔर औपचारिक शिक्षा में फाँक है। ये दोनों अलग-अलग दायरे हैं जिनका एक-दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं है। तीसरा, लोकतंत्र और राजनीति के बीच में फाँक है।

राजनीति शास्त्र विषय, इसे पहले शुरुआती कक्षाओं में राजनीति शास्त्र नहीं कहा जाता था, इसे ग्यारहवीं-बारहवीं कक्षा में यह नाम दिया जाता था। पहले हम इस नाम से भी बचते थे और इसे हम नागरिक शास्त्र कहते थे। राजनीति विज्ञान नामक विषय से जिन लोगों का वास्ता पड़ता है वे किसी एक चीज़ के बारे में सबसे शर्मिन्दा और लज्जित रहते हैं तो वह है - राजनीति शास्त्र! राजनीति शास्त्र को लेकर ऐसे भाव होते हैं कि क्या करूँ मैं? देखिए तो, शहर के नालों के मुआयने की ड्यूटी लग गई है मेरी! यह एक केन्द्रीय भाव है जो हर राजनीति शास्त्र की पुस्तक में था। नागरिक शास्त्र या बाद में राजनीति शास्त्र के नाम की कक्षा 6 से कक्षा 12 तक की जितनी भी पुस्तकें थीं उसके बारे में एक बात आप निश्चय के साथ कह सकते थे कि कोई एक चीज़ जिसे नहीं पढ़ाया जाता था, जिसको दूर से भी छुआ नहीं जाता था वह थी राजनीति।

आपने पिछले 20 सालों में एनसीईआरटी की किताबों के बारे में तमाम बहस सुनी होगी। तमाम हल्ला गुल्ला! भगवाकरण! ये फलाँ पार्टी का! कभी आपने राजनीति शास्त्र की किताब पर कोई विवाद सुना? मैंने कतई नहीं सुना। उसका कारण यह था कि उसमें राजनीति पढ़ाई ही नहीं जाती थी। उसमें कोई विवादास्पद बात थी ही नहीं। अगर राष्ट्रपति का चुनाव बताएँगे तो उसमें विवाद की गुंजाइश है ही कहाँ? आप कहिए कि राष्ट्रपति का चुनाव एकल संक्रमणीय आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली से होता है। जिस तरह का इस पद्धति का नाम है उसे सुनकर ही बच्चे थक जाते हैं। दुनिया के केवल इसी देश में राष्ट्रपति के चुनाव की यह पद्धति होती है। पता नहीं ऐसी विचित्र प्रणाली इस देश में क्यों अपनाई गई! राष्ट्रपति के चुनाव की पद्धति को हम ऐसे पढ़ा रहे हैं जैसे वही इस देश की

राजनीति का केन्द्रीय हिस्सा हो और उसी के इर्द-गिर्द पूरा देश घूमता हो। इसी वजह से सामान्य जनमानस में लोकतंत्र और राजनीति के बीच एक खाई बनी हुई है।

II
पाठ्यपुस्तकें लिखना और पाठ्यक्रम बदलना

आप लोगों को पता होगा कि देश में एनसीईआरटी केन्द्रीय स्तर पर किताबें लिखती है, जिनका किसी कारणवश केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड उपयोग करता है। हालाँकि उन्हें ऐसा करने की कोई ज़रूरत नहीं है। एनसीईआरटी का काम देश में आधुनिक आदर्श पाठ्यपुस्तक बनाकर दिखाना, उसका नमूना पेश करना है। जिस नमूने का इस्तेमाल करके देश में पाठ्यपुस्तक बन सकें। लेकिन वास्तव में एनसीईआरटी केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई) के बच्चों के लिए किताबें लिखती है। बाकी बोर्ड अपनी-अपनी किताबें बनाते हैं और अपने तरीके से चलाते हैं।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा :2005 के अनुरूप सभी विषयों की किताबें नए सिरे से लिखी गईं। केवल राजनीति विज्ञान ही नहीं, गणित, अर्थशास्त्र, भाषा आदि सभी विषयों की किताबें कक्षा 1 से 12 तक लिखी गईं। उसमें हमें भी अवसर मिला कि हम राजनीति शास्त्र की किताबों पर दोबारा गौर कर सकें, और लिख सकें। यह एक मायने में अनूठा अवसर था। उसमें पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तक दोनों को नए तरीके से लिखने का अवसर मिला। अन्यथा जिस किस्म का पाठ्यक्रम इससे पहले था उसमें नई पाठ्यपुस्तकें लिखने का कोई मतलब नहीं था क्योंकि उसमें कोई नई चीज़ कहने की गुंजाइश ही नहीं थी। मुझे लगता है कि एक किस्म के बदलाव और तमाम किस्म के सहयोगों के चलते हमें यह अवसर मिला है।

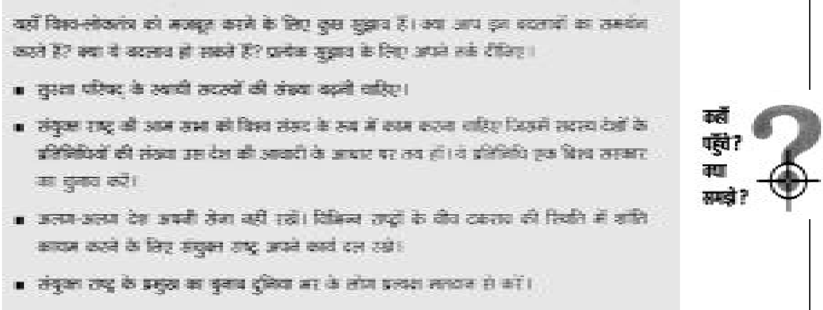
मुझे नहीं लगता कि इसकी पूरी तैयारी थी। दुनिया के दूसरे देशों में बड़ी-बड़ी संस्थाएँ इस पर काम करती रहती हैं कि किस विषय में क्या पढ़ाया जाए। जैसे अमेरिका में आपको एक ही विषय पर काम करने वाली ऐसी 10-15 बड़ी-बड़ी संस्थाएँ मिल जाएँगी जहाँ 50-100 लोग काम करते हैं। उन संस्थाओं का एक मात्र उद्देश्य है कि अमेरिका के स्कूलों के बच्चों को नागरिक शास्त्र की कैसी शिक्षा दी जाए? ये संस्थाएँ पिछले चालीस-पचास साल से काम कर रही हैं।

हमारा दुर्भाग्य यह था कि हमारे देश में न तो ऐसी संस्थाएँ हैं, न ही ऐसे व्यक्ति हैं जिनके साथ यह काम किया जा सके। हमारे यहाँ राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर समझते हैं कि स्कूल की पाठ्यपुस्तक लिखना तो घटिया और छोटा काम है। ऐसा ही अन्य विषयों में भी माना जाता

है। पाठ्यपुस्तक लिखना और वह भी स्कूल की! ऐसी दोयम दर्ज़े की चीज़ में वे अपना हाथ तक लगाने को तैयार नहीं हैं। वैसे भी हमारे यहाँ राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर अरस्तु से नीचे उतरने को सामान्यतः तैयार नहीं होते। कोई जो छत्तीसगढ़ में पढ़ा रहा है उससे पूछिए कि बस्तर में क्या हो रहा है? सल्वा जुडुम क्या है और उसके तहत क्या हो रहा है? राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर से आप पूछिए कि आपके पड़ोस में क्या हो रहा है तो वह यह समझता है कि आप उससे इतनी छोटी, इतनी बौनी, इतनी तुच्छ बात कर रहे हैं। उससे आप सिर्फ पचास हज़ार लोगों के मरने की बात कर रहे हैं। आप उससे प्लेटो के बारे में बात कीजिए, आप उससे 1956 से 1961 तक के भारत-पाक सम्बन्धों के बारे में बात कीजिए। वह आपको इसके बारे में ज्ञान देगा!

राजनीति शास्त्र विषय हमारे अपने सन्दर्भ से, जहाँ जिस सन्दर्भ में हम जीते हैं, कटा रहता है। आमतौर पर मेरा अनुभव यह रहा है कि सामान्यतः किसी इलाके के एक पत्रकार को वहाँ की राजनीति के बारे में ज़्यादा पता है बजाय एक राजनीति शास्त्र के प्रोफेसर के। अपने सन्दर्भ को समाहित करने के लिए हमारा अनुशासन तैयार नहीं है। हमारे देश में इसकी कोई तैयारी और कोई अनुभव नहीं है। इस चीज़ पर गौर करें कि इस देश के करोड़ों नागरिक, जो इस देश का भविष्य तय करेंगे वे कितने करोड़ घण्टे इस देश के तमाम स्कूलों में राजनीति या समाज या देश के बारे में सोचने में बिताते हैं। जिसको हम समाज विज्ञान की कक्षा कहते हैं उस कक्षा में कितने बच्चे पढ़ते हैं और उसे घण्टे से गुणा करें तो आप सोचिए कि एक वर्ष में कितने करोड़ घण्टे इस देश के भविष्य के बारे में चर्चा हुई? और उन घण्टों का हम कितना दुरुपयोग करते हैं! इस देश का अगर नवनिर्माण करना है तो कितने करोड़ घण्टे आपके पास उपलब्ध हैं! और उन करोड़ घण्टों में हम शायद एक छटाँक बात भी नहीं करते।

यह सब बताने के बाद मैं आपसे यह ज़िक्र भी करना चाह रहा था कि जो अवसर हमें मिला इसका उपयोग हमने कैसे किया? और इससे क्या हुआ और





पुरानी पाठ्य पुस्तक का एक पृष्ठ जिसमें वयस्क मताधिकार और लोकतंत्र की प्रतीक लोकसभा को पृष्ठभूमि में दिखाया गया है।

क्या चुनौतियाँ हैं? चुनौतियाँ बहुत भारी और बड़ी हैं। जो कुछ हुआ है वह बहुत छोटा है। पहला काम जो हुआ वह एनसीईआरटी के पाठ्यक्रम में बदलाव है। एनसीईआरटी ने किसी तरह से सीबीएसई को तैयार कर लिया कि वह अपना पाठ्यक्रम बदल दे। और ये कैसे हो गया!

बदलाव की बयार यानी ....

इस देश में कई बार बहुत बड़ी चीज़ें अनजाने में हो जाती हैं। मुझे लगा कि कुछ अनजाने में यह घटना भी हो गई कि सीबीएसई ने कुछ उनीन्देपन में कह दिया कि हाँ, आप बदल लीजिए तो हम भी बदल लेंगे। इससे पहले कि सीबीएसई जागती पाठ्यक्रम बदल चुका था। कोई बहुत गहन चर्चा इस पर नहीं हुई। बाद में इतिहासकार लिखेंगे कि राष्ट्रीय पाठ्यचर्या को बदलने के लिए पूरे देश में एक प्रक्रिया चली। मैं जानता हूँ कि इसके लिए25-30 लोगों में चर्चा हुई, और उसके चलते सब कुछ बदल दिया गया। लेकिन इससे एक बड़ा बदलाव आया, जो पहले पाठ्यचर्या

में आया और बाद में पाठ्यक्रम में।

पाठ्यक्रम में जो बदलाव आया, मैं खासकर राजनीति विज्ञान की बात करूँगा, वह यह कि कक्षा 6 से 8 तक हमने बच्चों को संस्थाओं के बारे में पढ़ाना बन्द कर दिया। कक्षा 6 के बच्चों को यह नहीं बताया जाएगा कि मुख्यमंत्री कौन होता है? प्रधानमंत्री कौन होता है? राष्ट्रपति कौन होता है इत्यादि? उनको उनके स्थानीय परिवेश के बारे में, उसकी राजनीति के बारे में बताया गया। राजनैतिक संस्थाओं के बारे में बताने की बजाय आज समाज में जो कुछ हो रहा है उसके बारे में बताया गया है। जैसे बाज़ार, मीडिया और टेलीविज़न के बारे में, जो कि गहरे तौर पर राजनैतिक चीज़ें हैं, लेकिन राजनैतिक संस्था के नाम से काम नहीं करतीं। इन चीज़ों से बच्चों का परिचय कराने की कोशिश की गई है। नागरिक शास्त्र की बजाय सामाजिक और राजनैतिक जीवन से परिचित कराने की कोशिश की गई है।

इन किताबों को ऐसा नाम दिया गया जिसमें कुछ राजनीति का, कुछ अर्थशास्त्र का और कुछ समाजशास्त्र का पुट हो। हमने इस तरह से अनुशासन की चारदीवारी को हटाने की कोशिश की है, जिसको पहले कक्षा 6 में बड़ी गम्भीरता से लिया जाता था। हमने तय किया कि हमें इससे कोई मतलब नहीं है कि राजनीति विज्ञान क्या है, अर्थशास्त्र क्या है और समाजशास्त्र क्या है? हमें लगता है कि बच्चा अपने इर्द-गिर्द के परिवेश के बारे में जानना चाहता है और उसे जानने दिया जाए। इसी सोच के चलते पाठ्यक्रम बदला गया। इससे पहले कक्षा 9 से 10 में भारत के संविधान की बारीकियाँ पढ़ाई जाती थीं। उन सब को हटाकर लोकतंत्र के बहाने उनका परिचय राजनीति से करवाने की कोशिश की है। कक्षा 9 व 10 में लोकतांत्रिक राजनीति के नाम से केवल दो किताबें आई हैं। बच्चों को लोकतंत्र के सिद्धान्त और व्यवहार के बारे में बताया गया है और खासतौर से हमारे देश में कैसा व्यवहार होता है, इसका परिचय करवाया गया है।

कक्षा 11 और 12 में राजनीति शास्त्र की बुनियाद से परिचित करवाया गया है। क्योंकि इन कक्षाओं में बच्चे राजनीति विज्ञान को ऐच्छिक विषय के रूप में चुनते हैं, जो भी बच्चे जिस भी कारण से चुनते हैं। बाद में मुझे पता चला कि राजनीति विज्ञान को चुनने का कारण इसमें अच्छे नम्बर आना है। इसके अलावा और कोई कारण नहीं है। दूसरा कारण, पता नहीं आपके इधर होता है या नहीं, मैं गंगानगर के जिस इलाके में पढ़ा हूँ वहाँ हर चीज़ पंजाबी लहज़े में होती थी। वहाँ अच्छे बच्चे सेंस (साइंस) पढ़ते थे और जो बेचारे सेंस के काबिल नहीं होते थे वे नॉनसेंस पढ़ते थे। अतः राजनीति विज्ञान पढ़ने के लिए शुद्धतः 'नॉनसेंस' लोग आते थे। और यह माना जाता था कि 'नॉनसेंस' वाले लोगों को ज़्यादा विशेष विकल्प देने की क्या ज़रूरत है! ज़्यादातर स्कूल बता देते हैं कि आप इतिहास, अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान, ये तीनों विषय पढ़ लीजिए। इसके चलते काफी लोग राजनीति विज्ञान लेते हैं।

पाठ्यपुस्तक लेखन की चुनौतियाँ

जो भी बच्चे राजनीति विज्ञान पढ़ते हैं उनके लिए हमने सोचा कि पुनः राजनीति

विज्ञान पढ़ाया जाए। बिना इसकी चिन्ता किए कि उसके अन्दर उप-अनुशासन हैं जिनके अपने-अपने मठ हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध वालों का अपना मठ है। सिद्धान्त वालों का अपना मठ है। इन मठों की चिन्ता किए बिना हमने सोचा कि हमें बच्चों को राजनीति सिखानी है और उसे राजनीति कैसे सिखाई जाए, इसके लिए अलग-अलग पाठ्यक्रम तैयार किए। जिसमें 11वीं में आकर उन्होंने पहली बार जाना कि भारतीय संविधान क्या है और व्यवहार में संविधान कैसे काम करता है? यह बताया कि हमारे अपने जीवन में संविधान का क्या महत्व है? उन्हें कुछ मिसाल और अवधारणाओं की मदद से राजनैतिक सिद्धान्तों के बारे में बताया गया है।

हमने दो बदलाव किए। एक, बच्चों को समकालीन विश्व के बारे में बताया जाए; क्योंकि अब तक ऐसा कायदा था कि राजनीति विज्ञान और इतिहास की किताबें उनको बताती थीं कि शीतयुद्ध क्या है? आखिरी अध्याय में कुछ इशारा कर दिया जाता कि पिछले 15 साल में हालत कुछ बदले हैं। हमने सन् 1991 से पहले की दुनिया की घटनाओं को एक अध्याय में समेट दिया और 1991 के बाद की दुनिया पर एक पूरी किताब बनाई कि आज हम जिस दुनिया में जी रहे हैं और जिसमें सोवियत संघ नहीं है, वह दुनिया कैसी है।

दूसरा बदलाव यह किया कि हमने पिछले साठ सालों की भारतीय राजनीति का इतिहास बताते हुए एक किताब लिखी। क्योंकि हम सबका यह अनुभव था कि आपातकाल आदि जैसी घटनाएँ हमारे जीवन में बहुत बड़ी घटनाएँ और बहुत बड़े बदलाव थे। आज हमारे स्कूल के औसत बच्चे को 20 से 30 के दशक के बारे में ज़्यादा जानकारी है बजाय 60 और 70 के दशक के। और फिर उससे हम आशा करते हैं कि वह विश्वविद्यालय में आकर अचानक 2007 की राजनीति के बारे में पढ़ना शुरू कर देगा।

अतः हमने तय किया कि सीधे 2007 पढ़ाने से पहले 1947 से 2007 के बीच का इतिहास पढ़ाया जाएगा। पहली बार हमने स्वतंत्र भारत की राजनीति का इतिहास पढ़ाने की कोशिश की है जिसमें ऐसा कोई मुद्दा नहीं है जिसको नहीं छुआ गया है। जिनके बारे में माना जाता था कि इनको छुआ नहीं जा सकता उन सब मुद्दों पर एक साधारण सपाट किताब लिखी गई जो बताती है कि पिछले 60 साल में क्या हुआ और जो राजनैतिक पार्टियों का नाम लेती है। आपातकाल के ऊपर पूरा एक बड़ा अध्याय लिखा गया। इनमें 1984 के दंगों का ज़िक्र है, 2002 के दंगों का ज़िक्र है जो बताते हैं कि क्या कुछ हुआ! यह सब पिछले 60 सालों के बारे में है।

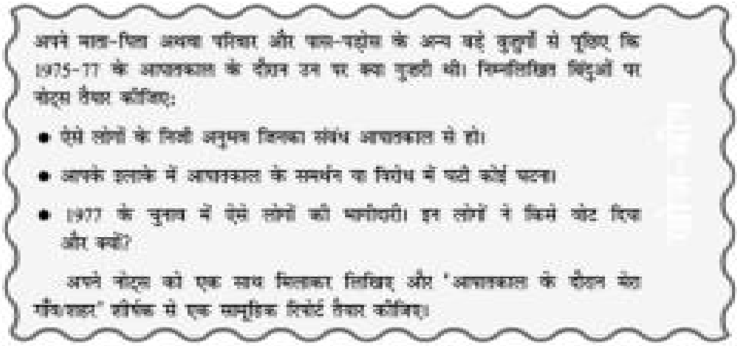
पहले यह सब परिवर्तन पाठ्यक्रम में हुए और उसके बाद पाठ्यपुस्तकों में बदलाव किए। पाठ्यपुस्तक के बदलाव कुछ ऐसे हैं जिनके बारे में सिर्फ बात नहीं की जा सकती, जिन्हें किताब में देखा जा सकता है। अभी किताबें आई हैं और स्कूल के बच्चे पढ़ रहे होंगे। उन्हें आप देखें तो यह बदलाव नज़र आएँगे। राजनीति शास्त्र में पहली बार हुआ कि काफी लोगों को जोड़कर बदलाव करने की कोशिश की गई। इतिहास में ये पहले भी हुआ था।







1947 से 2007 के भारत में क्या हुआ इसे बताते हुए उन सबका भी ज़िक्र हैं जिन्हें अब तक बताने से बचा जाता था। आपातकाल और दंगों पर भी खुलकर चर्चा की गई है।



अपने माता-पिता अथवा परिवार और पास-पड़ोस के अन्य बड़े बुज़ुर्गों से पूछिए कि 1975-77 के आपातकाल के दौरान उन पर क्या गुज़री थी। निम्नलिखित बिंदुओं पर नोट्स तैयार कीजिए:

- ऐसे लोगों के निजी अनुभव जिनका संबंध आपातकाल से हो।
- आपके इलाके में आपातकाल के समर्थन या विरोध में घटी कोई घटना।
- 1977 के चुनाव में ऐसे लोगों की भागीदारी। इन लोगों ने किसे वोट दिए और क्यों?

अपने नोट्स को एक साथ मिलाकर लिखिए और "आपातकाल के दौरान मेरा गाँव/शहर" शीर्षक से एक सामूहिक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

इस देश के इतिहासकारों ने पिछले 30 सालों में यह समझा कि स्कूल की शिक्षा एक महत्वपूर्ण चीज़ है और स्कूल के लिए किताबें लिखना कोई हल्का काम नहीं है।

दूसरी चुनौती, स्वरूप और विषयवस्तु, दोनों को एक साथ बदलने की थी क्योंकि इससे पहले राजनीति विज्ञान की किताबें बहुत ही नीरस थीं। हमने बहुत-से बच्चों और अध्यापकों से बात की। एक बात जो हमने बच्चों से बार-बार सुनी कि नागरिक शास्त्र बहुत उबाऊ है। यह बहुत रोचक जुमला है कि नागरिक शास्त्र बहुत उबाऊ है। यह ऐसा देश है जिसमें राजनीति का जुनून है। इस देश में आप किसी ढाबे में चले जाइए, ज़रूर कोई व्यक्ति इस बात पर शर्त लगाने को तैयार होगा कि भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) सरकार को गिराएगी या नहीं गिराएगी और चुनाव अक्टूबर में होंगे या नवम्बर में। आपको पान की हर दुकान और हर ढाबे पर राजनीति की चर्चा सुनाई पड़ जाएगी। राजनीति पर चर्चा करना इस देश में फैशन है। और इतना कि मैं हैरान होता हूँ - क्या वास्तव में राजनीति इतनी महत्वपूर्ण चीज़ है! उसी देश में स्कूल के बच्चे कहते हैं कि नागरिक शास्त्र उबाऊ है! बच्चों की इसमें कोई रुचि नहीं है। कैसे सम्भव है कि उसी बच्चे के माँ-बाप को जिस चीज़ का जुनून है, वही चीज़ बच्चे को उबाऊ लगती है?

उबाऊ में केवल रुचि का अभाव ही नहीं था, बहुत-सी चीज़ें शामिल थीं। हमने एक तरह से कमर कस ली कि राजनीति विज्ञान की किताबें उबाऊ नहीं होंगी, और चाहे कुछ भी हो।

उबाऊ से रोचक बनाना

हमने रंगों का खूब प्रयोग किया। एक चीज़ जो मुझे काफी देर से समझ में आई कि एक सामान्य परिवार में, सामान्य शहरी निम्न वर्गीय परिवार में और एक सामान्य ग्रामीण परिवार में बच्चे के पास घर में स्कूल की किताब को छोड़कर और कोई

किताब होती ही नहीं है। ऐसा नहीं है कि घर में सैकड़ों किताबें हैं जिनमें से पाठ्यपुस्तक एक है। घर में यह एक मात्र किताब होती है और उस एक मात्र किताब में रंग की कमी क्यों? हमने कोशिश की है कि इन किताबों को खूबसूरती से डिज़ाइन किया जाए। कोशिश की है कि इनमें कहानियाँ हों, खूब फोटो हों और दुनिया भर से कार्टून शामिल किए जाएँ।

कार्टून के दो फायदे हैं। एक तो यह कि कार्टून देखकर हँसी आती है। कक्षा में हँस लेना एक राजनैतिक कदम है। क्योंकि आप हँसेंगे तो इसका मतलब है कि आप डरे हुए नहीं हैं। जैसे इस सेमीनार हॉल में हँस लेना, बच्चे का रो लेना, ये सब एक बहुत बड़ी राजनीतिक घटना है। क्योंकि यह एक सत्ता के स्थापित सन्तुलन को हिलाती है। कक्षा में बच्चे हँस लें, यह एक बहुत बड़ा कदम हो जाएगा। दूसरा, कई ऐसी चीज़ें होती हैं जिन्हें हम अपने शब्दों में नहीं कह सकते। पाठ्यपुस्तक अपने शब्दों में नहीं कह सकती, उसे एक कार्टून कह देता है। कोई हमारे पीछे जूता लेकर चलेगा तो हम कह देंगे कार्टून था मैं क्या करूँ! इसी नज़रिए से तमाम कार्टून्स किताब के अन्दर डाले गए कि बच्चों के लिए किताबें थोड़ी-सी सहज-सरल हो सकें। फिल्मों के संवाद खूब डाले गए हैं।

आप सबको 'दीवार' का वह संवाद याद होगा जिसमें अमिताभ बच्चन के बचपन का रोल कर रहा बाल कलाकार कहता है कि नीचे फेंका हुआ पैसा नहीं उठाऊँगा। अस्मिता की इससे अच्छी मिसाल क्या हो सकती है। वह बच्चा इज़्ज़त की माँग कर रहा है। जिसे आज इस देश का प्रत्येक दलित माँग रहा है। अस्मिता के विचार को आप दीवार फिल्म के संवाद के माध्यम से बताइए न। विभाजन के बारे में बताने के लिए आप उन्हें 'गरम



स्कूल के बच्चों द्वारा बनाया गया यह 'कोलाज' मशहूर लोगों को विभिन्न उत्पादों का प्रचार करते दिखा रहा है।

हाल ही में मीडिया में एक रिपोर्ट थी कि एक लोकप्रिय क्रिकेट खिलाड़ी ने 180 करोड़ रुपये में तीन वर्ष के लिए कई विज्ञापन करने का अनुबंध किया है। एक लोकप्रिय महिला एक विज्ञापन के लिए पाँच लाख रुपये या उससे अधिक ले सकती है।

कार्टून बूझें





हवा' दिखाइए। हमने तय किया कि इस तरह की समस्याओं पर बात करने के लिए तमाम किस्से बताए जाएँ, कहानियाँ बताई जाएँ। मैं आज भी मानता हूँ कि यदि आपको 60-70 के दशक की उत्तर भारत की राजनीति समझनी है तो पाठ्यपुस्तकों की बजाय श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' नामक उपन्यास बेहतर है। उस समय की राजनीति को समझने में राजनीति विज्ञान की पुस्तकें उतनी मदद



1975 में बनी दीवार फिल्म में जूते पॉलिश करने वाला एक लड़का फेंक कर दिए गए पैसे को उठाने से इंकार कर देता है। वह मानता है कि उसके काम की भी गरिमा है और उसे उसका भुगतान आदर के साथ किया जाना चाहिए।

दीवार फिल्म का वह मशहूर दृश्य

नहीं कर सकेंगी जितना राग दरबारी कर सकता है। यदि आप रेणु को पढ़ें तो सब-ऑल्टर्न स्टडीज़ उतना नहीं बता पाएँगी जितना कि रेणु का साहित्य बता देगा। हमने ये सब चीज़ें किताबों में डालने की कोशिश की है।

कक्षा 7 की किताब में एक प्रयोग किया गया है। हमने एक कहानी ली है और वह कहानी बताती है कि एक दिन मम्मी ने हड़ताल कर दी। एक घर है जहाँ माँ कहती है कि आज मैं हड़ताल करूँगी। बस! आज मैं काम नहीं करूँगी। इसके बाद उस घर में क्या होता है? वह एक साधारण मध्यम वर्गीय सिख परिवार है और यह भी एक महत्वपूर्ण बात है कि वह एक सिख परिवार है। सिख केवल भांगड़ा नहीं करते बल्कि एक सामाजिक जीवन भी जीते हैं जो हमारी कल्पना शक्ति से बाहर की बात है। एक साधारण परिवार में मम्मी कहती है कि आज मैं हड़ताल करूँगी और फिर उस घर में शाम तक क्या होता है, यह उसकी कहानी है। आखिर में बेटी कहती है कि मैं तो कहती थी कि मेरी मम्मी काम नहीं करती, मेरे पापा ही काम करते हैं। शाम तक उस बच्ची को पता लग जाता है कि मम्मी क्या काम करती है। ये सब मामले राजनीति से जुड़े हैं। इन चीज़ों को, जैसा मैंने कहा, बयान नहीं कर सकते।

कक्षा 9-10 की किताब जाति और राजनीति के बारे में चर्चा करती है जैसा कि 30 साल पहले रजनी कोठारी ने लिखा था। जाति क्या है? इसके बारे में हम चर्चा करने से घबराते हैं। जाति और राजनीति का क्या रिश्ता है? ये किताबें इन चीज़ों पर बात करती हैं। कक्षा 12 की किताब कश्मीर पर बात करती है, आपातकाल पर बात करती है, नागालैण्ड पर बात करती है। हम मानते हैं कि खुले रूप में राजनीति पर बात करना मात्र आपको पक्षपातपूर्ण नहीं बना देगा। राजनीति के बारे में बात करते हुए एक सन्तुलन बनाया जा सकता है। किताब ऐसी होनी चाहिए कि उसे पढ़कर किसी को ऐसा

नहीं लगे कि जब किताब लिखी गई थी तो उस समय किस पार्टी का राज था। यह एक न्यूनतम मानदण्ड होना चाहिए। हमने अपने लिए यह एक कसौटी बनाई। इस सबके पीछे एक तत्व है - लोकतंत्र का एक नया दर्शन, लोकतंत्र का एक नया सिद्धान्त। आमतौर पर सिद्धान्त कहीं और बनते हैं और लागू कहीं और किए जाते हैं। हमारा आदर्शवाद बड़ा अधूरा है और हम इसे ढोए जा रहे थे। एक बड़ा बदलाव आ रहा है और जो आना चाहिए कि, क्या हम इस देश के लोकतंत्र को इस तरह से पढ़ने की कोशिश कर सकते हैं जिसमें इस देश के लोकतंत्र को केन्द्र में रखा जा सके। इसकी खूबी और इसकी खराबी, दोनों को, हम इसके अपने पैमाने पर जाँचकर देखें।

लेकिन हम मानते हैं कि यदि हम थोड़ा-सा अमेरिका जैसा दिखना शुरू करेंगे तो हम अच्छे हैं। अमेरिका जैसे कम दिखने शुरू हों तो हम खराब हैं। यह एक पैमाना है जिसको राजनीति विज्ञान अभी तक नहीं छोड़ पाया है। इसका हाल कुछ वैसा ही है जैसे गर्मी के मौसम में बाबूजी ने टाई बाँधी हुई है। पता चला कि साहब सामने से नेकर पहनकर चले आ रहे हैं। ऐसा अकसर होता है। गर्मी के मौसम में हम टाई लगाकर चलते रहते हैं और ऊपर से कोट भी पहन लेते हैं। हमने कोशिश की कि वह सब उतारकर रख दें और इस देश का जैसा मिज़ाज है, इस देश की जैसी आबो-हवा है उस हिसाब से देखें कि क्या कुछ चल रहा है। यह सब एक दर्शन है।



योगेन्द्र यादव - मशहूर राजनीतिक टिप्पणीकार और चुनाव विश्लेषक हैं। वे एनसीईआरटी की कक्षा 6 से 12 तक की राजनीति विज्ञान की नई पाठ्यपुस्तकों की रचना में मुख्य सलाहकार रहे हैं। विकासशील समाज अध्ययन पीठ, नई दिल्ली में सीनियर फैलो हैं।
यह लेख राजनीति विज्ञान की अब तक चली आ रही पाठ्यपुस्तकों की समस्याओं और नवनिर्मित पाठ्यपुस्तकों के अनुभवों पर आधारित योगेन्द्र यादव के व्याख्यान से लिया गया है। यह व्याख्यान दिगन्तर संस्था द्वारा जयपुर में आयोजित किया गया था।